भारतीय उच्च शिक्षा, अनुसंधान एवं शिकारी पत्रिकाओं का फैलता जाल
एक समीक्षा

अखिलेश कुमार*

पिछले दशक से शिकारी पत्रिकाओं की चर्चा वैश्विक स्तर पर तब से की जा रही है जब से जेफ्रे बिआल ने इस प्रकार की शोध पत्रिकाओं की एक सूची जारी की। हालाँकि, बाद में विवादों के कारण वह सूची बिआल को हटानी पड़ी, परंतु उसके बाद से विद्वत जनों के मध्य यह विषय वृहत चर्चा में बना हुआ है। भारत में उच्च शिक्षा की नियामक संस्था विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए पत्रिकाओं की एक सूची जारी की, पुनः उसे संशोधित किया और यू.जी.सी. केयर लिस्ट जारी की, जिसका उद्देश्य, उच्च शिक्षा में शोध की गुणवत्ता सुनिश्चित करना है। यू.जी.सी. केयर लिस्ट शोध की गुणवत्ता सुनिश्चित करने का प्रथम चरण हो सकता है, परंतु सिर्फ़ यह सूची शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए काफ़ी नहीं है। भारतीय शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए भारत में शोध पत्रों के प्रकाशन के अवसरों की उपलब्धता और उनका प्रोत्साहन भी अति आवश्यक है। साथ ही चंद बड़े प्रकाशन गृहों जिनका कब्ज़ा लगभग एक सदी से वैज्ञानिक शोध पत्रों के प्रकाशनों पर रहा है, उनके प्रभाव में आकर नवोदित शोध पत्रिकाओं को शिकारी पत्रिका की श्रेणी में रखकर उसे यू.जी.सी. केयर लिस्ट से बाहर कर देना, भारत में अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं के प्रकाशन के स्वप्न को भी तोड़ देगा और भारत में गुणवत्ता युक्त अनुसंधान की संभावनाओं को भी कम कर देगा एवं हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में गुणवत्तापूर्ण प्रकाशनों के समस्त विकल्प समाप्त हो जाएँगे। अतः इस संदर्भ में एक संतुलित नीति की आवश्यकता है ताकि भारत में 'मेक इन इंडिया' की तर्ज़ पर 'पब्लिश इन इंडिया' के स्वप्न को साकार किया जा सके। यह शोध पत्र उच्च शिक्षा, अनुसंधान प्रकाशन एवं शिकारी शोध पत्रिकाओं के त्रिकोण का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है।

इक्कीसवीं सदी का दूसरा दशक उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण दशक के रूप में देखा जा सकता है। यह दशक वैश्विक स्तर पर अनुसंधान एवं शोध पत्रों की गुणवत्ता पर गहन चर्चा, शोध साहित्य की चोरी आदि पर बनाए गए विभिन्न नियमों, कानूनों का साक्षी रहा है। भारतीय उच्च शिक्षा तंत्र भी इन समस्त चर्चाओं एवं परिवर्तनों से अछूता नहीं रहा है। अनुसंधान की स्तरीयता एवं गुणवत्ता इससे पूर्व कभी भी इतनी गंभीर चर्चा का विषय नहीं था। इस समयावधि के दौरान भारतीय उच्च

**असिस्टेंट प्रोफ़ेसर*, शिक्षा विभाग, वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा, राजस्थान 324010

नोट— (इस आलेख में 'शिकारी पत्रिका' का तात्पर्य प्रिडेटरी जर्नल से है।)

शिक्षा की सर्वोच्च नियामक संस्था विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यू.जी.सी.) ने कई नियम बनाए और अनुभवों के आधार पर उसे परिवर्तित भी किया। यह दशक उच्च शिक्षा में कार्यरत समस्त शिक्षकों के लिए और शोधार्थियों के लिए भी अत्यंत महत्व का रहा। गुणवत्ता की इस कड़ी में शिक्षकों के समस्त कार्यकलापों एवं अनुसंधान की समस्त रचनात्मकता को अकादमिक निष्पादन सूचकांक एवं उसे शिक्षकों की प्रोन्नति से जोड़ दिया गया। सामान्यतः इन प्रयासों को गुणवत्ता में वृद्धि से जोड़कर न देखने के बजाय ये गुणवत्ता में ह्रास का कारण बनते चले गए। इस कारण पुनः इन प्रावधानों को परिवर्तित एवं संशोधित किया गया। इन्हीं प्रयासों के परिणामस्वरूप शिकारी पत्रिकाओं का उद्भव एवं तत्पश्चात् उनका पराभव भी देखा गया। अवधि का सकारात्मक पहलू यह था कि परिवर्तन यथा समय कर लिए गए, जिसमें यू.जी.सी. की जर्नल लिस्ट के उपरांत यू.जी.सी. की केयर लिस्ट गुणवत्ता नियंत्रण के प्रयासों का एक उत्तम उदाहरण है।

विज्ञान सार्वभौमिक होता है, अतः वैज्ञानिक सूचनाओं एवं प्राप्तियों को साझा किया जाना वैज्ञानिक प्रगति का आधार है एवं वैज्ञानिक शोध पत्रिकाएँ इस साझेदारी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं (डेमिर, 2018)। किसी भी वैज्ञानिक खोज एवं आविष्कार की प्रथम शर्त होती है कि उसे वैज्ञानिक समुदाय के सामने चर्चा एवं आलोचना के लिए रखा जाए ताकि उसकी विश्वसनीयता, सत्यता एवं वैधता साबित हो सके और इस प्रकार की चर्चा एवं आलोचना के लिए पारंपरिक रूप से वैज्ञानिक पत्रिकाएँ एक प्लेटफ़ॉर्म उपलब्ध कराती हैं। इस तरह के प्लेटफ़ॉर्म पर एक शोधार्थी पूर्ण निष्ठा एवं ईमानदारी से अपने अनुसंधान की प्राप्तियों एवं सीमाओं की चर्चा करता है। इस प्रकार के प्रकाशन में प्रकाशन की प्रक्रिया अत्यंत जटिल होती है एवं प्रकाशन से पूर्व किसी भी शोध पत्र को कई गुणवत्ता जाँच के दौर से गुज़रना होता है, जिसमें सर्वप्रथम संपादकीय निर्णय एवं तदुपरांत एक कठिन एवं जटिल समीक्षा की प्रक्रिया से गुज़रना होता है। जिसे समकक्ष व्यक्ति समीक्षा (पीयर रिव्यूड) कहा जाता है और ऐसी समीक्षाओं के जटिल दौर से गुज़रने एवं कई बार आवश्यक संशोधनों के उपरांत उपयुक्त पाए जाने के बाद ही, कोई भी अनुसंधान पत्र प्रकाशित होकर अपने त्रुटिरहित रूप में वैज्ञानिक समुदाय के सामने आता है। वैज्ञानिक अनुसंधान की उत्कृष्टता एवं प्रगति का भारतीय इतिहास अत्यंत समृद्ध रहा है (सीतापति और अन्य, 2016)।

शिकारी शोध पत्रिकाएँ पिछले एक दशक से संपूर्ण विश्व के लिए चिंता का विषय बनी हुई हैं। पिछले कुछ वर्षों से अकादमिक प्रकाशनों की निष्ठा पर शिकारी पत्रिकाओं ने प्रश्न चिह्न खड़े कर दिए हैं (बर्थोलोम्यु, 2014)। क्योंकि शिकारी प्रकाशकों एवं शिकारी पत्रिकाओं की बाढ़-सी आ गई है, जो लेखकों से पैसे लेकर गुणवत्ता विहीन सामग्री भी छापने को तत्पर हैं। इस प्रकार की शिकारी पत्रिकाएँ समकक्ष व्यक्ति समीक्षित होने का दावा तो करती हैं, परंतु वास्तव में वे समकक्ष व्यक्ति समीक्षित नहीं होती हैं (एरिक्सन और हेलेग्सन, 2016)। इतना ही नहीं, इस प्रकार की पत्रिकाओं को संरक्षित करने हेतु वर्तमान समय में कई ऐसी संस्थाएँ भी खड़ी हो गई हैं जो इस प्रकार की पत्रिकाओं की रैंकिंग एवं उनके इम्पैक्ट फ़ैक्टर के निर्धारण का काम करती हैं (पटवर्धन, 2019) और आश्चर्यजनक रूप से

शिकारी पत्रिकाओं द्वारा उनका इम्पैक्ट फ़ैक्टर भी अत्यंत उच्च बताया जाता है। उच्च इम्पैक्ट फ़ैक्टर के लिए उन्हें सिर्फ़ मनचाहे इम्पैक्ट फ़ैक्टर निर्धारण एजेंसी से संपर्क करना होता है। एक और चिंता का विषय यह है कि वर्तमान समय में इंटरनेट आधारित ऑनलाइन शिकारी शोध पत्रिकाएँ अधिक लोकप्रिय होने की वजह से गूगल पर कोई भी की-वर्ड सर्च करने पर सर्च इंजन ऑप्टिमाइज़ेशन के कारण शिकारी पत्रिकाओं में छपे शोध ही सबसे ऊपर दिखाई देते हैं। ये आने वाले दिनों में अत्यंत विकट स्थिति पैदा कर सकते हैं एवं निम्न स्तरीय अनुसंधान पत्रों को स्तरीय अनुसंधान पत्रों के रूप में स्थापित एवं लोकप्रिय बना सकते हैं। इस प्रकार के कार्यों को बढ़ावा देने में सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी का योगदान भी महत्वपूर्ण रहा है। क्योंकि सूचना एवं सम्प्रेषण तकनीकी के विकास ने ऑनलाइन पत्रिकाएँ आरंभ किया जाना एवं उनका सतत संचालन न केवल आसान बना दिया, अपितु उसकी प्रशासनिक जटिलता एवं संधारण को आसान एवं सस्ता बना दिया। वैसे यदि देखा जाए तो इंटरनेट ने हमारे जीवन को परिवर्तित एवं उन्नत बनाने के लिए अनगिनत प्रयास किए हैं, जिसमें त्वरित रूप से वैज्ञानिक जानकारी को वैश्विक स्तर पर साझा करने की क्षमता भी है। परंतु इंटरनेट आधारित तकनीकों ने प्रकाशित वैज्ञानिक शोध की विश्वसनीयता एवं वैधता के लिए एक खतरा भी पैदा कर दिया है (नहाई, 2015)।

शिकारी पत्रिकाओं की ओर वैश्विक ध्यान केंद्रित करने का श्रेय जेफ्रे बिआल (जो कि यूनिवर्सिटी ऑफ़ कोलोराडो डेन्वेर में पुस्तकालयाध्यक्ष थे) को जाता है। 'प्रिडेटरी जर्नल्स' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम उन्होंने किया जिसे इस समस्त शोध पत्र में 'शिकारी पत्रिका' के रूप में संबोधित किया गया है। उन्होंने अपने अध्ययनों के आधार पर शिकारी पत्रिकाओं की सूची बनाई (बिआल, जे., 2015; कार्टराईट, 2016; क्लार्क और स्मिथ, 2015; क्लेमन और अन्य, 2017; मानका और अन्य, 2018; मास्टन और ऐशक्राफ़्ट, 2016; नरिमानी और डादका, 2017; शमशीर और अन्य, 2017; श्याम, 2015; जिया, 2015)। इस सूची के जारी होने के उपरांत अचानक वैश्विक स्तर पर विद्वत वैज्ञानिक समुदाय के मध्य इन पत्रिकाओं को लेकर एक बहस छिड़ गई और इन शिकारी पत्रिकाओं को प्रतिबंधित करने की माँग की जाने लगी। भारत में शिकारी पत्रिकाओं के बढ़ते जाल को नियंत्रित करने एवं शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के क्रम में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने 2019 में एक समिति बनाई। इस समिति ने यू.जी.सी. द्वारा पूर्व में जारी सूची से लगभग 4000 शिकारी पत्रिकाओं को बाहर कर दिया (पटवर्द्धन, 2019)। कुक के शोध अध्ययन में वर्ष 2013 से 2017 के बीच शिकारी पत्रिकाओं की कुल संख्या में 600 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई (कुक, 2017)।

इस संदर्भ में यह स्पष्ट करना भी समीचीन होगा कि विभिन्न अनुसंधानों में यह पाया गया है कि वैश्विक स्तर पर प्रकाशित की जा रही शिकारी पत्रिकाओं में से लगभग 62 प्रतिशत पत्रिकाएँ भारत से छपती हैं (डेमिर, 2018)। डेमिर के अध्ययन के अनुसार भले ही लगभग 62 प्रतिशत शिकारी पत्रिकाएँ भारत से छपती हों, परंतु भारतीय शोधार्थियों द्वारा मात्र 10 प्रतिशत शोध पत्र ही इन शिकारी पत्रिकाओं में प्रकाशित कराया जाता है, परंतु (पटवर्धन, 2017) के अनुसार, कई शिकारी पत्रिकाएँ भारत से प्रकाशित

होती हैं एवं इनमें छपने वाले शोध पत्रों में भी भारतीय शोधार्थियों का योगदान बढ़ा है।

ये शिकारी पत्रिकाएँ उच्च शिक्षा एवं अनुसंधान के संदर्भ में कई गंभीर प्रश्न खड़े करती हैं, जिसमें सबसे पहला प्रश्न तो यही है कि किन परिस्थितियों में इस प्रकार की अनुसंधान पत्रिकाओं की आवश्यकता पड़ी? इन शिकारी पत्रिकाओं के प्रसार को कैसे उपयुक्त वातावरण उपलब्ध हुआ? क्यों उच्च शिक्षा में कार्यरत शिक्षक इन शिकारी पत्रिकाओं में प्रकाशन के लिए मजबूर हुए? इनका संभावित कारण यह हो सकता है कि उच्च शिक्षा में शिक्षकों के मूल्यांकन हेतु मानदंडों के रूप में उनके द्वारा लिखे एवं प्रकाशित किए गए शोध पत्रों को अत्यधिक महत्व प्रदान किया गया अर्थात् शिक्षकों की कर्मठता एवं गुणवत्ता का एक पैमाना उनके द्वारा लिखे गए एवं प्रकाशित किए गए शोध पत्रों को माना गया। साथ ही शिक्षकों की प्रोन्नति को उनके द्वारा किए गए प्रकाशनों की कुल संख्या से जोड़ दिया गया, तब से शिकारी पत्रिकाओं की बाढ़-सी आ गई थी। इसके अतिरिक्त दूसरा कारण यह हो सकता है कि उच्च शिक्षा में संलग्न विश्वविद्यालयों के शिक्षकों पर धीरे-धीरे अनुसंधान करने का दबाव बढ़ा और उस अनुसंधान की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए प्रतिष्ठित वैज्ञानिक शोध पत्रिकाओं में उनके अनुसंधान पत्र का प्रकाशन अनिवार्य माना गया। ऐसे में समस्त शिक्षकों के सामने यह समस्या उत्पन्न हो गई कि यदि निर्धारित समय सीमा में पर्याप्त मात्रा में उनके नाम पर शोध पत्रों का प्रकाशन नहीं हुआ तो उनकी प्रोन्नति रुक जाएगी और उन्हें उनकी पेशेवर प्रोन्नति के साथ-साथ आर्थिक नुकसान भी होगा। इस प्रकार एक शिक्षक के द्वारा किए गए अनुसंधान का मूल्यांकन संख्याओं का खेल हो गया, यथा प्रकाशनों की कुल संख्या, साथ ही मैट्रिक्स, जैसे—H-इंडेक्स, इम्पैक्ट फ़ैक्टर, कुल साईटेशन की संख्या, ऑल्टमीट्रिक स्कोर आदि और इस स्थिति को 'प्रकाशित करें या नष्ट हो जाएँ' (पब्लिश या पेरिश) के वातावरण की संज्ञा दी गई (कार्टराईट, 2016)।

इस प्रकार शोध प्रकाशन हेतु कुछ शिक्षक कुछ ऐसी शोध पत्रिकाओं की तलाश करने लगे, जिनमें यथासंभव कम से कम समय में शोध पत्रों का प्रकाशन सुनिश्चित हो सके। शिक्षकों की इन आवश्यकताओं का लाभ उठाते हुए कई प्रकाशकों ने अपनी-अपनी शोध पत्रिकाएँ आरंभ कर दीं और इन सभी शोध पत्रिकाओं में भावी प्रोन्नति के लिए इच्छुक शिक्षकों के शोध पत्र एवं आलेख अपेक्षाकृत ज़्यादा जल्दी स्वीकृत होने लगे। जिसके लिए सामान्यतः लेखकों से कुछ धनराशि प्रकाशन शुल्क के रूप में ली जाने लगी और पाठकों के लिए पत्रिका निःशुल्क कर दी गई। जैसा कि *नेचर पत्रिका* में प्रकाशित अपने आलेख में प्रोफ़ेसर भूषण पटवर्धन ने माना है कि 2013 में डॉक्टरेट की उपाधि के लिए शोधार्थी के लिए यह अनिवार्य किया गया था कि वह आवश्यक रूप से कम से कम दो शोध पत्र प्रकाशित करे, जिसके पीछे यह मंशा थी कि शोध की गुणवत्ता में वृद्धि होगी, परंतु इस नियम ने शोध में भ्रष्टाचार को ज़्यादा बढ़ावा दिया (पटवर्द्धन, 2019)। इतना ही नहीं कई बार शोध पत्र स्तरीय एवं गुणवत्तापूर्ण हो, परंतु उसका प्रकाशन किसी शिकारी पत्रिका में कर दिया गया हो तब उस शोध पत्र की गुणवत्ता, वैधता एवं शिक्षित समुदाय में उसकी स्वीकार्यता कम हो जाती है, क्योंकि उसका प्रकाशक एक शिकारी प्रकाशक है (रोबर्ट्स, 2016)।

जैसा कि मानका और अन्य ने लिखा है, शिकारी पत्रिका अथवा शिकारी प्रकाशकों की कोई सर्वमान्य स्पष्ट परिभाषा नहीं है (मानका और अन्य, 2018)। इस कारण वैज्ञानिक पत्रिकाओं को गुणवत्तापूर्ण पत्रिका अथवा शिकारी पत्रिका की श्रेणी में वर्गीकृत करना अत्यंत कठिन है। इसके अतिरिक्त वर्तमान समय में वैश्विक स्तर पर कोई भी ऐसा तंत्र नहीं है जो किसी शोध पत्रिका की दावेदारी का खंडन कर सके। उदहारण के लिए, यदि कोई शोध पत्रिका यह दावा करती है कि वह अंतरर्राष्ट्रीय स्तर की है, वह समकक्ष व्यक्ति समीक्षित है और यदि पत्रिका का आई.एस.एस.एन. नंबर है तब पाठक या लेखक के पास कोई विकल्प नहीं है कि इसका सत्यापन अथवा खंडन किया जा सके जो शिकारी पत्रिकाओं के फलने-फूलने का एक बहुत बड़ा कारण है।

शिकारी पत्रिकाओं पर पिछले दशक से की जा रही वैश्विक स्तरीय विस्तृत चर्चाओं का एक दूसरा पहलू भी है। एक तो शिकारी पत्रिकाओं की कोई सर्वमान्य परिभाषा नहीं है जिसके कारण बिआल, जिन्होंने सर्वप्रथम इस प्रकार की पत्रिकाओं की सूची जारी की थी, उन्हें उस सूची को वेबसाइट से हटाना पड़ा। जब से मुक्त शैक्षिक संसाधनों की चर्चा आरंभ हुई है तब से पुराने एवं पारंपरिक प्रकाशन गृह सतर्क हो गए हैं और उन्हें लगने लगा कि मुक्त शैक्षिक संसाधनों की बढ़ती संस्कृति से उनके व्यवसाय पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है। विगत कई दशकों से वैज्ञानिक शोध पत्रों के प्रकाशन का व्यवसाय कुछ ही प्रकाशन गृहों के पास है एवं इन कथित प्रकाशन गृहों के जर्नल में अच्छे से अच्छे शोध का प्रकाशित होना भी अत्यंत समय साध्य एवं श्रम साध्य कार्य है, जिसमें कई बार वर्षों लग जाते हैं। इनके अतिरिक्त इन कथित स्तरीय शोध पत्रिकाओं में लगभग सभी की वेबसाइट पर 'लेखक सेवाएँ' पैकेज उपलब्ध हैं, जिनमें एक बड़ी राशि 500 यू.एस. डॉलर से लेकर 5000 यू.एस. डॉलर तक प्रदान करके उनकी सेवाएँ ली जा सकती हैं। एक लेखक को सिर्फ़ इतना करना होता है कि वह जर्नल जिसमें अपना आलेख प्रकाशित करना चाहता है, उसका नाम और इसका एक ब्लूप्रिंट प्रदान करना होता है। इसके अतिरिक्त ये सभी प्रकाशक लेखक को 'ओपन एक्सेस' का विकल्प उपलब्ध कराते हैं जिसमें लेखक को एक निश्चित राशि 500 यू.एस. डॉलर से लेकर 5000 यू.एस. डॉलर देनी होती है और प्रकाशक उसे आश्वस्त करता है कि उसका शोध पत्र समस्त पाठकों को मुफ्त उपलब्ध होगा। कई प्रकाशक तो लेखक से पत्र छापने और पाठक से उस पत्र को पढ़ने, दोनों के लिए शुल्क लेते हैं, जिसे प्रकाशन के व्यवसाय में 'डबल डिप फेनोमेना' के नाम से जाना जाता है। व्यवसाय की दृष्टि से देखें तो इन बड़े प्रकाशन गृहों का व्यवसाय बड़ा नज़र आता है। कई ऐसे पारंपरिक स्तरीय जर्नल भी हैं जिनमें शिकारी पत्रिकाओं के समान प्रवृत्ति देखी जा सकती है। (एरिक्सन और हेलेग्सन, 2017)

यदि भारतीय शोध पत्रिकाओं, जिनमें से कई शिकारी पत्रिकाओं की श्रेणी में सम्मिलित हैं, अधिकांश में प्रकाशन शुल्क के नाम पर 1500 से लेकर 5000 रूपये शुल्क के रूप में लेखक से लिया जाता है तथा ये सभी पत्रिकाएँ पाठकों के लिए मुफ्त उपलब्ध होती हैं। इस प्रकार यह आरोप तो स्वतः ही खारिज हो जाता है कि व्यावसायिक लाभ उठाने की दृष्टि से शिकारी पत्रिकाओं का प्रचलन आरंभ हुआ। एक अच्छा भारतीय शोधार्थी जो हिंदी भाषा में

© NCERT not to be republished

प्रवीण है, परंतु अँग्रेज़ी भाषा पर उसकी पकड़ अच्छी नहीं है, उसके पास कथित अच्छे जर्नल में शोध पत्र के प्रकाशन के या तो अवसर नहीं हैं या फिर उसे लगभग 4000–5000 यू.एस. डॉलर की 'लेखक सेवाएँ' लेनी होंगी जो भारत के किसी विश्वविद्यालय के एक सहायक आचार्य के एक महीने के वेतन के समतुल्य है। एक भारतीय शोधार्थी के पास किसी भी प्रकार के शोध पत्र के प्रकाशन के अवसर अत्यंत सीमित हैं और यदि वह हिंदी या किसी क्षेत्रीय भाषा में शोध पत्र लिखता है, तब तो यह अवसर लगभग न के बराबर हैं। भारतीय विश्वविद्यालयों, राष्ट्रीय महत्व की उत्कृष्ट संस्थाओं एवं यहाँ तक कि राष्ट्रीय स्तर के संवैधानिक निकायों द्वारा संचालित जर्नल या तो लम्बे समय से अनियमित हैं या बंद होने की कगार पर हैं। ये स्थितियाँ एक भारतीय शोधार्थी को कथित शिकारी पत्रिकाओं की शरण में जाने के लिए मजबूर करती हैं। यदि अच्छे शैक्षिक संस्थान अच्छे जर्नलों का प्रकाशन नियमित रूप से करते रहें तो शायद शिकारी जर्नलों का प्रकाशन कम हो जाए।

यहाँ पर एक और महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि जिन पत्रिकाओं को शिकारी पत्रिकाएँ मानकर यू.जी.सी. की वर्तमान केयर लिस्ट से हटाया गया है, उनमें से अधिकतर पत्रिकाएँ हिंदी की, क्षेत्रीय भाषाओं की, द्विभाषी या बहुअनुशासनात्मक प्रकृति की हैं। इनमें से कई ऐसी हैं जिन्हें उपयुक्त संसाधन उपलब्ध हों तो उनमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पत्रिका बनने की क्षमता रखती हैं। आगे यू.जी.सी. को इस दिशा में भी कार्य करना होगा कि वे भारतीय शोधार्थियों को प्रकाशन के लिए उपयुक्त प्लेटफ़ॉर्म उपलब्ध कराने की दिशा में कार्य करे, उच्च शिक्षा में कार्यरत समस्त संस्थाओं को गुणवत्तापूर्ण शोध पत्रिकाओं के प्रकाशन की ज़िम्मेदारी दी जाए एवं उन्हें प्रोत्साहित किया जाए। उच्च शिक्षा संस्थाओं के बजट में शोध पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए अलग से प्रावधान किए जाएँ, गुणवत्तापूर्ण शोध पत्रों के प्रकाशन को शैक्षिक संस्थाओं की ग्रेडिंग एवं रैंकिंग में महत्व प्रदान किया जाए। इन सबके अलावा क्यों न शोध पत्रों की रैंकिंग की भारतीय व्यवस्था का विकास किया जाए? कब तक भारत जैसा प्रतिभाशाली देश किसी पाश्चात्य संस्था के इम्पैक्ट फ़ैक्टर और H-इंडेक्स के जाल में कैद रहेगा? शिक्षा मंत्रालय एवं यू.जी.सी. को इस दिशा में गंभीरता से विचार करना चाहिए और 'मेक इन इंडिया' के समान ही 'पब्लिश इन इंडिया' की दिशा में कार्य करना चाहिए। यदि इस तरह के सार्थक प्रयास नहीं किए गए तो समस्त शोध पत्रिकाओं एवं उनके प्रकाशन व्यवसाय को शैक्षिक एवं आर्थिक नुकसान हो सकता है।

शिक्षा मंत्रालय, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा भारत में प्रकाशन के अवसरों की उपलब्धता एवं उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु गंभीरतापूर्वक विचार कर ठोस कदम उठाए जाने चाहिए तभी गुणवत्तायुक्त प्रकाशन के नाम पर बड़े प्रकाशन गृहों के द्वारा शोषित होने तथा शिकारी पत्रिकाओं के जाल से भारतीय शिक्षकों एवं शोधार्थियों को बचाया जा सकता है। इस हेतु सर्वप्रथम समस्त विश्वविद्यालयों, राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे सभी विभिन्न विषयों में अपने-अपने विभिन्न विभागों में अनुसंधान पत्रिकाओं की शुरुआत करें और यदि पहले से प्रकाशित कर रहे हों तो उन्हें नियमित करें, जिसमें भारतीय भाषाओं या हिंदी में प्रकाशित की जाने वाली शोध पत्रिकाओं को विशेष प्राथमिकता प्रदान की जा सकती है एवं

इन समस्त संस्थाओं द्वारा प्रकाशित शोध पत्रिकाओं को मुक्त शैक्षिक संसाधन के लाइसेंस के अंतर्गत समस्त पाठकों के लिए निःशुल्क ऑनलाइन एवं ऑफ़लाइन उपलब्ध कराया जाए। साथ ही, यदि ऐसी अनुसंधान पत्रिका कोई अन्य प्रकाशक या गैर सरकारी संस्था प्रकाशित कर रही हो तो एक शोध पत्र प्रकाशित करने के लिए लेखक से प्राप्त किए जाने वाले शुल्क की उच्च सीमा तय कर दी जाए। इसके अतिरिक्त इससे संबंधित नियम भी बनाए जाएँ कि किसी अनुसंधान पत्रिका के एक अंक में अधिकतम कितने पत्र प्रकाशित किए जाएँगे। क्योंकि इस शोध पत्र के लेखन के दौरान शोधार्थी ने पाया है कि विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के समस्त प्रयासों के बावजूद कुछ शिकारी पत्रिकाएँ यू.जी.सी. केयर लिस्ट में अभी भी शामिल हैं और उनके एक अंक में 150 से लेकर 500 तक की संख्या में शोध पत्र हाल के अंकों में प्रकाशित किए गए हैं।

यह भी देखा जा रहा है कि कई शोध पत्रिकाएँ जिनका केवल प्रिंट आई.एस.एस.एन. है, वे यू.जी.सी. केयर लिस्ट में शामिल होने के नाम पर उसी आई.एस.एस.एन. के साथ ऑनलाइन भी प्रकाशित की जा रही हैं एवं उनका व्यापार वर्तमान समय में उच्च स्तर पर है। इस प्रकार की शोध पत्रिकाओं को ब्लैकलिस्ट किए जाने, उनका आई.एस.एस.एन. रद्द किए जाने एवं इस प्रकार के प्रकाशकों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई किए जाने संबंधी सख्त कानूनों की आवश्यकता है। शोध पत्रिकाओं के द्वारा प्रतिवर्ष उनके निर्धारित आवृति से ज़्यादा प्रकाशित किए जा रहे अतिरिक्त अंकों एवं विशेषांकों को पूर्णतः प्रतिबंधित किया जाना चाहिए, क्योंकि ज़्यादा लाभ के चक्कर में कई शोध पत्रिकाओं का प्रत्येक माह एक सामान्य अंक के अलावा विशेषांक भी सतत प्रकाशित किया जा रहा है जो उन्हें गुणवत्तारहित सामग्री प्रकाशित करने के अवसर प्रदान कर रहा है। प्रकाशन से संबंधित नियमों में यह भी शामिल किया जाना चाहिए कि एक संपादक की योग्यता क्या होगी एवं उस अनुसंधान पत्रिका में न्यूनतम कितने संपादक होने चाहिए। यह एक अत्यंत प्रभावी कदम है जो शोध पत्रों की गुणवत्ता नियंत्रण के लिए आवश्यक है। इसे समस्त शोध पत्रिकाओं के लिए अनिवार्य बना देने पर शिकारी पत्रिकाओं पर एक हद तक लगाम कसी जा सकती है।

'मेक इन इंडिया' की तर्ज़ पर भारतीय शिक्षकों एवं शोधार्थियों हेतु 'पब्लिश इन इंडिया' जैसा एक व्यापक अभियान चलाए जाने की आवश्यकता है एवं भारतीय भाषाओं की पत्रिकाओं में छपे शोध पत्रों को भी अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्र की मान्यता दिए जाने की आवश्यकता है। भारतीय भाषाओं में प्रकाशित की जा रही शोध पत्रिकाओं को प्रोत्साहित करने हेतु उन्हें विशेष आर्थिक सहायता प्रदान की जा सकती है। शिक्षकों की प्रोन्नति में उनके प्रकाशनों पर अंक प्रदान करने के क्रम में यह नियम लागू किया जा सकता है कि भारतीय भाषाओं में प्रकाशन पर ज़्यादा अंक प्रदान किए जाएँ या पद विशेष की अर्हता हेतु आवश्यक न्यूनतम शोध पत्रों का कुछ प्रतिशत हिंदी या अन्य भारतीय भाषा में प्रकाशित किया जाना, अनिवार्य किया जा सकता है। इन सबके अतिरिक्त हिंदी या भारतीय भाषाओं के शोध पत्रों हेतु संदर्भ ग्रंथ सूची की 'भारतीय पद्धति' या दिशा-निर्देश विकसित किए जाएँ एवं भारतीय भाषाओं में प्रकाशित अनुसंधान पत्रिकाओं की गुणवत्ता के भारतीय मानदंड एवं शोध पत्रिकाओं

© NCERT not to be republished

के भारतीय 'इम्पैक्ट फ़ैक्टर' निर्धारण हेतु मानदंड निर्धारित किए जाएँ।

सारांशतः यह कहा जा सकता है कि भारत में उच्च शिक्षा की नियामक संस्था विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए जारी यू.जी.सी. केयर लिस्ट एक स्वागत योग्य कदम है, परंतु सिर्फ़ यह सूची शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए काफी नहीं है। भारतीय शोध प्रकाशनों की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए भारत में शोध पत्रों के प्रकाशन के अवसरों की उपलब्धता और उनके प्रोत्साहन हेतु उपयुक्त नीति निर्माण एवं उनका क्रियान्वयन आवश्यक है। चंद बड़े प्रकाशन गृहों जिनका कब्ज़ा लगभग एक सदी से वैश्विक वैज्ञानिक प्रकाशनों पर रहा है, उनके प्रभाव एवं दुष्प्रचार के जाल में उलझकर नवोदित शोध पत्रिकाओं को शिकारी पत्रिका की श्रेणी में रखकर उसे यू.जी.सी. केयर लिस्ट से बाहर कर देना, भारत में अंतर्राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं के प्रकाशन के स्वप्न पर कुठाराघात है, जो गुणवत्तायुक्त अनुसंधान की संभावनाओं को कम एवं हिंदी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में गुणवत्तापूर्ण प्रकाशनों के समस्त विकल्प को समाप्त कर सकता है। वर्तमान भारत में 'मेक इन इंडिया' की तर्ज़ पर 'पब्लिश इन इंडिया' के स्वप्न को साकार किए जा सकने वाले प्रयासों एवं नीतियों की आवश्यकता है।

संदर्भ

एरिक्सन, एस., और जी. हेलेगसन. 2017. द फ़ॉल्स एकेडमी— प्रिडेटरी पब्लिशिंग इन साइंस एंड बायोएथिक्स. *मेडिसिन, हेल्थ केयर एंड फ़िलोसफ़ी.* 20(2), पृष्ठ संख्या 163–170. 10 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1007/s11019-016-9740-3 से प्राप्त किया गया है.

———. 2018. टाइम टू स्टॉप टॉकिंग अबाउट 'प्रिडेटरी जर्नल्स'. *लर्नड पब्लिशिंग.* 31(2), पृष्ठ संख्या 181–183. सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1002/leap.1135 से प्राप्त किया गया है.

कार्टराईट, वी. ए. 2016. ऑउथर्स बीअवेयर! द राइज़ ऑफ़ द प्रिडेटरी पब्लिशर्स. *क्लीनिकल एंड एक्सपेरिमेंटल ओप्थाल्मोलोजी.* 44(8), पृष्ठ संख्या 666–668. 6 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1111/ceo.12836 से प्राप्त किया गया है.

कुक, सी. 2017. प्रिडेटरी जर्नल्स— द वर्स्ट थिंग इन पब्लिशिंग, एवर. *जर्नल ऑफ़ ऑर्थोपेडिक एंड स्पोर्ट्स फ़िज़िकल थेरेपी.* 47(1), पृष्ठ संख्या 1–2. 8 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.2519/jospt.2017.0101 से प्राप्त किया गया है.

क्लार्क, जे., और आर. स्मिथ. 2015. फ़र्म एक्शन नीडेड अगेंस्ट प्रिडेटरी जर्नल्स. *बीएमजे (ऑनलाइन).* 6 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1136/bmj.h210 से प्राप्त किया गया है.

क्लेमन्स, एम., एम. डी कोस्टाइसिल्वा, ए. ए. जॉय, के. डी. कोबे, एस. मजरेलो, सी. स्टोबर, और बी. हट्टन. 2017. प्रिडेटरी इन्विटेशंस फ्रॉम जर्नल्स— मोर देन ए न्यूसेंस? द *ओंकोलोजिस्ट.* 22(2), पृष्ठ संख्या 236–240. 6 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1634/theoncologist.2016-0371से प्राप्त किया गया है.

© NCERT not to be republished

जिया, जे. 2015. प्रिडेटरी जर्नल्स एंड देअर आर्टिकल पब्लिशिंग चार्जेज. *लर्नड पब्लिशिंग*. 28(1), पृष्ठ संख्या 69–74. 11 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1087/20150111 से प्राप्त किया गया है.

डेमिर, एस. बी. 2018. प्रिडेटरी जर्नल्स— हू पब्लिशेज़ इन देम एंड व्हाय? *जर्नल ऑफ़ इनफ़ोर्मेट्रीक्स*. 12(4), पृष्ठ संख्या 1296–1311. 10 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1016/j.joi.2018.10.008 से प्राप्त किया गया है.

नहाई, एफ. 2015. द राइज़ ऑफ़ प्रिडेटरी जर्नल्स— व्हाट डिफ़रेंसेज डज़ इट मेक? *एस्थेटिक सर्जरी जर्नल*. 35(8), पृष्ठ संख्या 1042–1043. 11 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1093/asj/sjv085 से प्राप्त किया गया है.

नरीमनी, एम., और एम. डीदका. 2017. *प्रिडेटरी जर्नल्स एंड पेरिश्ड आर्टिकल— ए लैटर टू एडिटर. एमरजेंसी*. 5(1), पृष्ठ संख्या 258–260. 1 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.22037/emergency.v5i1.12595 से प्राप्त किया गया है.

पटवर्द्धन, बी. 2019. वर्ल्ड व्यू— इंडिया स्ट्राइक्स बैक अगेंस्ट प्रिडेटरी जर्नल्स. *नेचर*. 571, 7. 1 सितंबर, 2020 को https://www.nature.com/articles/d41586-019-02023-7 से प्राप्त किया गया है.

बर्थोलोम्यू, आर.ई. 2014. साइंस फ़ॉर सेल— द राइज़ ऑफ़ प्रिडेटरी जर्नल्स. *जर्नल ऑफ़ द रॉयल सोसाइटी ऑफ़ मेडिसिन*. 107(10), पृष्ठ संख्या 384–385. 8 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1177/0141076814548526 से प्राप्त किया गया है.

बिआल, जे. 2015. प्रिडेटरी जर्नल्स एंड द ब्रेकडाउन ऑफ़ रिसर्च कल्चर. *इंफ़ॉर्मेशन डेवलपमेंट*. 31(5), पृष्ठ संख्या 473–476. 6 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1177/0266666915601421 से प्राप्त किया गया है.

———. 2017. रायटर्स फ़ोरम— प्रिडेटरी जर्नल्स, पिअर रिव्यू एंड एजुकेशनल रिसर्च. *न्यू होरिज़ोन्स इन अडल्ट एजुकेशन एंड ह्यूमन रिसोर्स*. 29(1), पृष्ठ संख्या 54–58.

मास्टन, वाय. बी., और ए. एस. ऐश्क्राफ़्ट. 2016. द डार्क साइड ऑफ़ ट्रेडिशनल एंड ओपन एक्सेस वर्सेस प्रिडेटरी जर्नल्स. *नर्सिंग एजुकेशन पर्सपेक्टिव्स*. 37(5). 3 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1097/01.NEP.0000000000000064 से प्राप्त किया गया है.

मानका, ए., डी. मोहर, एल. कगसी, देवीर, जेड और एफ. देरियु. 2018. हाउ प्रिडेटरी जर्नल्स लीक इनटू पबमेड. *सी.एम.ए.जे.* 190(35), पृष्ठ संख्या E1042–E1045. 3 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1503/cmaj.180154 से प्राप्त किया गया है.

मोहर, डी., और ए. श्रीवास्तव. 2015. यू आर इनवाईटेड टू सबमिट. *बी. एम. सी. मेडिसिन*. 13(1), पृष्ठ संख्या 1–4. 4 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1186/s12916-015-0423-3 से प्राप्त किया गया है.

रोबर्ट्स, जे. 2016. प्रिडेटरी जर्नल्स— थिंक बीफ़ोर यू सबमिट. *हेडेक*. 56(4), पृष्ठ संख्या 618–621. 1 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.1111/head.12818 से प्राप्त किया गया है.

श्याम, ए. 2015. प्रिडेटरी जर्नल्स— व्हाट आर दे? *जर्नल ऑफ़ ऑर्थोपेडिक केस रिपोर्ट्स*. 5(4), पृष्ठ संख्या 1–2. 13 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.13107/jocr.2250-0685.330 से प्राप्त किया गया है.

सीतापति, जे. एस., संतोष कुमार, जे.यू., और ए. एस. हरीशा 2016. इंडियाज़ साइनटिफ़िक पब्लिसकेशन इन प्रिडेटरी जर्नल्स— नीड फ़ॉर रेगुलेटिंग क्वालिटी ऑफ़ इंडियन साइंस एंड एडुकेशन. *करंट साइंस*. 111(11), पृष्ठ संख्या 1759–1764. 4 सितंबर, 2020 को https://doi.org/10.18520/cs/v111/i11/1759-1764 से प्राप्त किया गया है.

© NCERT not to be republished